अग्नि[1], मार्कण्डेय एवं भविष्य पुराणों में भगवान् शिव

अग्नि पुराण में अग्निदेव ने महर्षि वसिष्ठ से ईशान-कल्प की कथा का वर्णन किया है। नारद पुराण(पूर्वखण्ड, अध्याय 99) के अनुसार इस पुराण में पन्द्रह हजार श्लोक हैं। वेंकटेश्वर प्रेस से छपे अग्नि पुराण में 383 अध्याय हैं जबकि अन्य प्रतियों में 382 हैं। क्योंकि वेंकटेश्वर प्रेसवाली प्रति में 135 वाँ अध्याय(संग्रामविजयविद्या) अन्य प्रतियों से अतिरिक्त है। इस पुराण में नाना प्रकार की विद्याओं का उल्लेख है। परम्परा से इस पुराण को अग्नि-देव की महत्ता प्रतिपादन करनेवाला माना जाता है। पर यथार्थ में ऐसा नहीं है। अग्नि आदि देवों की तुलना में भगवान् विष्णु का इसमें ज्यादा गुणगान किया गया है। ऐसा होनेपर भी इसमें जहाँ कहीं प्रसंग आया है वहाँ भगवान् शिव को सर्वोच्च स्थान दिया गया है।

मार्कण्डेय पुराण में महामुनि मार्कण्डेय तथा ब्राह्मणकुमार क्रौष्टुकि और जैमिनि के साथ संवाद है, इसलिये इस पुराण को मार्कण्डेय पुराण कहते हैं। नारद पुराण(पू. ख. 98/2) के अनुसार इसमें नौ हजार श्लोक हैं। इस पुराण में मुख्यत: भगवान् शिव के अर्द्धांग शिवा की महिमा का विशेष वर्णन है। यद्यपि इस पुराण में भगवान् शिव से संबंधित किसी मुख्य प्रसंग का उल्लेख नहीं है तथापि देवी की महिमा भगवान् शिव की महिमा से पृथक नहीं है। शिव एवं शिवा दोनों अभिन्न हैं। शिव की समस्त क्रियाओं का आधार शिवा ही हैं। इस पुराण में ब्रह्मा एवं विष्णु से संबंधित प्रसंगों का भी अभाव है फलस्वरूप इस पुराण में उनकी गरिमा के बारे में भी कोई चर्चा नहीं है। अत: इस पुराण में भगवान् शिव की महिमा का परोक्षरूप से ही(देवी की महिमा के माध्यम से) वर्णन किया गया है।

भविष्य पुराण के वर्तमान में पाँच प्रकार के पाठ मिलते हैं। नारद पुराणानुसार(पू. ख. 100/5) इसमें अघोरकल्प का वृत्तान्त है। इसमें 14000 श्लोक हैं जो पाँच पर्वों में बँटे हैं। तीसरे पर्व में भगवान् शिव की महिमा का वर्णन है। इस पुराण में तीनों देवों की समता एवं एकता का भी प्रतिपादन किया गया है। परन्तु नारद पुराणोक्त तीसरे पर्व की बातें वर्तमान में लेखक को उपलब्ध भविष्य पुराण[2] की प्रतियों में नहीं मिलतीं। भविष्य पुराण में भी भगवान् शिव से संबंधित प्रसंग लगभग नगण्य हैं। यही कारण है कि उसमें भगवान् शिव के गौरव की गाथा विस्तार से नहीं पायी जाती। मात्र कहीं-कहीं संकेत भर प्राप्त होता है।

भगवान् शिव का स्वरूप

अग्नि पुराण में भगवान् शिव को एक स्थल पर ज्ञानस्वरूप, परमब्रह्म एवं परम बुद्धिमान् कहा

---

1. यहाँ जिस 'अग्नि पुराण' की प्रति का प्रयोग किया गया है वह गुरुमण्डल ग्रन्थमाला के अन्तर्गत 1957 में 5, क्लाइव रोड कलकत्ता से प्रकाशित है।

2. गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित 'संक्षिप्त भविष्यपुराण' तथा नाग पब्लिशर्स, दिल्ली द्वारा 1984 में तीन खण्डों में प्रकाशित 'श्रीभविष्यमहापुराणम्'।

गया है। ब्रह्मादि देवता उनकी शक्ति से पैदा हुए हैं तथा वे उन्हीं की अभिव्यक्तियाँ हैं(अग्नि पु. 304/2-3)। उनको परम कारण माना गया है(अ. पु. 88/6)। उन्हें दाता, भोक्ता एवं विश्वरूप भी माना गया है। जीव को भी तत्त्वतः शिव से अभिन्न माना गया है(अ. पु. 74/81-82)। किसी प्रसंग में वसिष्ठजी भगवान् शिव को ब्रह्म, आकाश, अग्नि, जीव, अव्यक्त, अहं, इन्द्रिय, सर्वात्मरूप, शास्त्र-पुराणरूप, बुद्धिरूप, रज एवं सत् से परे, त्रिगुणरूप, वेदों से परे आदि कहते हुए उनकी लिंगरूप में पूजा करते हैं(अ. पु. 217/2-10)।

पशुपति के 'अस्त्र-मन्त्र' का वर्णन करते हुए भगवान् शिव को पन्द्रह नेत्रोंवाले, नाना रूपधारी, श्मशान-प्रिय, सभी प्रकार की पूर्णता प्रदान करनेवाले, भक्त-वत्सल, अनन्त शिर, बाहु और पैरवाले, पूर्ण, रोगहारी, पापहारी, सूर्य, चन्द्र और अग्नि को नेत्र रूप में धारण करनेवाले, भगवान् विष्णु के कवच, त्रिशूल, पाश, धनुष आदि अस्त्रों को धारण करनेवाले माना गया है(अ. पु. 322/1)। उन्हें श्वेतवर्णवाला, चन्द्रशेखर एवं सर्वव्यापी कहा गया है(अ. पु. 74/50-51)।

अघोर के 'अस्त्र-मन्त्र' के वर्णनवाले अध्याय में भगवान् शिव को सभी मन्त्रों एवं जीवों का अधिपति माना गया है। उन्हें ब्रह्मा तथा सभी विद्याओं का भी अधिपति बताया गया है। उन्हें दयास्वरूप, ब्रह्म, पापनाशक, वर देनेवाला, परमेश्वर, सभी भूतों का स्वामी, शाश्वत एवं सर्वज्ञ आदि कहा गया है(अ. पु. 323/18-21)।

मन्त्रा ईशानमुख्याश्च धर्मकामादिदायकाः।
ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्।
ब्रह्मणश्चाधिपतिर्ब्रह्म शिवो मेऽस्त् सदाशिवः।।[1] (अग्नि पु. 323/18)

'रुद्र-शान्ति' के मन्त्रों में शिवजी को परम रहस्यमय, अमर, मृत्यु के स्वामी, प्रकाश-स्वरूप, आकाश की तरह व्यापक, मृत्युञ्जय, परम दयालु, योगेश्वर, सुखकर्त्ता, ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र से परे तथा सब कुछ प्रदान करनेवाला कहा गया है(अ. पु. 324/9-13)।

उपरोक्त संदर्भों में भगवान् शिव के निर्गुण एवं सगुण दोनों रूपों की चर्चा है। निर्गुणरूप में वे परब्रह्म, परमेश्वर, ज्ञानस्वरूप, ब्रह्मा, विष्णु एव रुद्र से परे हैं जबकि सगुण रूप में वे पंचमुखी, पन्द्रह नेत्रों तथा दस भुजावाले, भक्तवत्सल, अनन्त शिर, बाहु एवं पैरवाले, विश्वरूप, विषपान करनेवाले(अ. पु. 3/8-9), ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र, जगत् आदि सभी के परमकारण, पशुपति, भोग-मोक्षकारी, रोग-शोकहारी, त्रिशूल, पाश, धनुष आदि अस्त्रों को धारण करनेवाले, सर्वव्यापी, चन्द्रचूड, सर्वज्ञ तथा मृत्युञ्जय आदि हैं।

भविष्य पुराण में एक स्थल पर प्रसंग आता है कि कणाद के शिष्यों से पराजित हो पाणिनि

1. इस श्लोक की अन्तिम दो पंक्तियाँ ईशानमन्त्र अथवा महानारायण उपनिषद् के श्लोक (17/5) के ही संक्षिप्त संस्करण हैं।

ने केदारक्षेत्र में भगवान् शिव से वर पाने के लिये कठोर तपस्या की। तपस्या के फलस्वरूप शिव के प्रकट होनेपर वे भगवान् शिव की स्तुति में कहते हैं-

नमो रुद्राय महते सर्वेशाय हितैषिणे।
नन्दीसंस्थाय देवाय विद्याभयकराय च।।
पापान्तकाय भर्गाय नमोऽनन्ताय वेधसे।
नमो मायाहरेशाय नमस्ते लोकशंकर।। (भ. पु. प्रतिसर्गपर्व 2/31/7-8)

यहाँ भगवान् शिव को सबका ईश अर्थात् सबके स्वामी, कल्याणकारी, विद्या एवं अभय प्रदान करनेवाले, पाप का नाश करनेवाले, प्रकाश-स्वरूप, माया का हरण करनेवाले एवं लोकों का स्वामी कहा गया है।

महाभारत के अठारहवें दिन के युद्ध में पाण्डवों के विजय के उपरान्त काल की भावी गति को जानकर पाण्डवों के शिविर की रक्षा के लिये श्रीकृष्ण ने भगवान् शिव से प्रार्थना की थी। वे अपनी प्रार्थना में शिव को सभी प्राणियों के स्वामी, संसार का पालन तथा संहार-कर्त्ता एवं पापों को हरनेवाला कहा है।

नमः शांतायरुद्राय भूतेशाय कपर्दिने।
कालकर्त्रे जगद्भर्त्रे पापहर्त्रे नमोनमः।। (भ. पु. प्रतिसर्ग प. 2/36/7)

उमा-महेश्वर व्रत के प्रसंग में कहा गया है कि-

उमामहेश्वरौ देवौ सर्वलोकपितामहौ।
व्रतेनानेन सुप्रीतौ भवेतां मम सर्वदा।। (भविष्य पु. उत्तरपर्व 23/21)

यहाँ पर उमा-महेश्वर को सभी लोकों का पितामह कहा गया है। पितामह का तात्पर्य है जो ब्रह्मादि का भी जनक हो। क्योंकि ब्रह्माजी सभी लोकों के स्रष्टा या पिता कहे जाते हैं। भावार्थ है कि भगवान् शिव से ही ब्रह्मादि की सृष्टि हुई है।

भविष्य पुराण में भी एक स्थल पर ब्रह्मा एवं विष्णु में परस्पर श्रेष्ठता के प्रश्न पर होनेवाले विवाद का अति संक्षिप्त विवरण प्राप्त होता है। वहाँ कहा गया है कि उन दोनों के समक्ष अनंत योजन विस्तार का ज्योतिर्लिंग प्रकट हुआ जिसके आदि एवं अन्त का पता उन दोनों से नहीं चला। तब वे दोनों अत्यन्त लज्जित हो भगवान् शिव की स्तुति करने लगे जिसके परिणाम-स्वरूप शिव के दर्शन हुए। इस प्रसंग में भगवान् शिव की श्रेष्ठता को दर्शाने का प्रयास किया गया है।(भ. पु. प्र. प. 4/14/18-21)

एक अन्य स्थल पर भगवान् शिव को सभी देवों तथा ब्रह्माण्ड का ईश्वर या स्वामी बताया गया है।

ब्रह्माण्डे ये स्थिता देवास्तेषां स्वामी महेश्वरः।

ब्रह्माणेशः शिव साक्षाद्रुद्रः कालाग्निसन्निभः। (भ. पु. प्र. प. 4/14/63, 53)

माहेश्वरव्रत के वर्णन में भगवान् शिव को सर्वात्मा, अनन्तधर्मों को धारण करनेवाले, ज्ञानरूप, सद्योजात, पिनाक धारण करनेवाले, महादेव, पशुपति, परमानंद, अर्द्धचन्द्र को धारण करनेवाले, त्र्यम्बक तथा महेश्वर आदि कहा गया है।(भ. पु. उ. प. 97/5-17)

त्र्यंबकाय नमस्तुभ्यं महेश्वरमतः परम्।
नमः पशुपते नाथ नमस्ते शंभवे नमः।।
नमस्ते परमानंद नमः सोमार्द्धधारिणे। (भ. पु. उ. प. 97/15-17)

शैवमत में शिव एवं शिवा या ब्रह्म एवं माया एक दूसरे से अभिन्न माने जाते हैं। निर्गुण शिव अपनी शक्ति(शिवा या माया) का आश्रय लेकर ही ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्ररूप धारण कर सृष्टि-प्रक्रिया का संचालन करते हैं। इसीलिये मार्कण्डेय पुराण में देवी की स्तुति में ब्रह्माजी एक स्थलपर कहते हैं कि "मुझको, भगवान् शंकर को तथा भगवान् विष्णु को भी तुमने ही शरीर धारण कराया है।"

विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च।[1]

(मार्क. पु. देवीमाहात्म्य, प्रथम अध्याय/84, संक्षिप्त मार्कण्डेय एवं ब्रह्मपुराणांक, गीताप्रेस गोरखपुर)

इसी प्रकार एक अन्य स्थल पर देवता लोग देवी की स्तुति में कहते हैं कि आप ही सबकी आश्रय हैं। यह समस्त जगत् आपका अंशभूत है, क्योंकि आप सबकी आदिभूत अव्यक्ता परा प्रकृति हैं।

सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूत-
मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या।।[2]

(मार्क. पु. देवीमाहात्म्य, चतुर्थ अध्याय/7, संक्षिप्त मार्कण्डेय एवं ब्रह्मपुराणांक, गीताप्रेस गोरखपुर)

इस पुराण में देवी के माहात्म्य को लेकर अनेकों उद्धरण एवं प्रसंग हैं जिसका उल्लेख यहाँ आवश्यक नहीं है। देवीमाहात्म्य को प्रकारान्तर से भगवान् शिव का ही माहात्म्य समझा जाना चाहिये क्योंकि दोनों में अभेदत्व है।

शिवोपासना

भगवान् शिव की लिंग में सर्वत्र पूजा की जानी चाहिये क्योंकि बिना लिंगपूजा के कोई भी शिव-पूजा पूर्ण नहीं होती(अ. पु. 54/7)। लिंगपूजा के सन्दर्भ में कहा गया है कि भगवान् शिव लोगों पर अनुग्रह करने के लिये लिंग में निवास करते हैं। वे सद्गुणों, कामनाओं, भोगों एवं मोक्ष को देनेवाले हैं। उनकी पूजा पंचाक्षर मन्त्र से करनी चाहिये। जो लिंगार्चन नहीं करता है वह सद्गुण आदि से रहित है। लिंगार्चन से ही भोग एवं मोक्ष प्राप्त हो सकता है। अतः व्यक्ति को जीवनपर्यन्त लिंगार्चन

1. 78/65; मार्कण्डेयमहापुराणम्, अनुवादक एवं संपादक डॉ धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री, साहित्य भण्डार, शिक्षा साहित्य प्रकाशक, सुभाष बाजार मेरठ, 1983 ।
2. 81/7, मार्कण्डेयमहापुराणम् ।

करना चाहिये। बिना उसकी पूजा के भोजन ग्रहण नहीं करना चाहिये। जीवन भले ही समाप्त हो जाय परन्तु शिवपूजा न छूटे (अ. पु. 327/10-12)।

लिंगार्चनाद् भुक्तिमुक्तिर्यावज्जीवमतो यजेत्।
वरं प्राणपरित्यागो भुंजीतापूज्यनैव तम्।। (अग्नि पु. 327/12)

आगे कहा गया है कि रुद्रदेव की उपासना से व्यक्ति स्वयं रुद्रस्वरूप को प्राप्त कर लेता है (अ. पु. 327/13)। जो व्यक्ति तीनों काल (संध्या) में पार्थिवलिंग की बिल्वपत्रों से पूजा करता है वह अपने एक सौ ग्यारह पीढ़ियों को तार देता है और वह स्वर्ग प्राप्त करता है (अ. पु. 327/15)।

त्रिसन्ध्यं योऽर्चयेल्लिंगं कृत्वा बिल्वेन पार्थिवम्।
शतैकादशिकं यावत् कुलमुद्धृत्य नाकभाक्।। (अग्नि पु. 327/15)

लिंग-स्थापन तथा मंदिर-निर्माण को काफी पुण्यप्रद बताया गया है। यज्ञ, दान, तप, स्वध्याय तथा तीर्थ-सेवन आदि से करोड़ों गुना फल व्यक्ति को लिंग की स्थापना से प्राप्त होता है (अ. पु. 327/14)।

सर्वयज्ञतपोदाने तीर्थे वेदेषु यत्फलम्।
तत्फलं कोटिगुणितं स्थाप्य लिंगं लभेन्नरः।। (अग्नि पु. 327/14)

अपनी क्षमता के अनुरूप छोटा या बड़ा मन्दिर बनवाना चाहिये। छोटे या बड़े दोनों प्रकार के मंदिर-निर्माण का फल एक जैसा ही होता है। मंदिर-निर्माण करनेवाला अपनी 21 पीढ़ियों का उद्धार कर देता है और ऐश्वर्य को प्राप्त करता है। ईट, पत्थर, लकड़ी या मिट्टी से मंदिर-निर्माण का फल कई गुना होता है। मंदिर-निर्माण का इतना अधिक फल है कि आठ ईटों से मंदिर बनानेवाला भी स्वर्ग को प्राप्त करता है। यहाँतक कि खेल-खेल में रेत या मिट्टी से मंदिर बनानेवाला भी स्वर्ग को प्राप्त करता है (अ. पु. 327/16, 18, 19)।

अग्नि पुराण में भी पंचाक्षर मंत्र (**नमः शिवाय**) की अधिक महिमा बतायी गयी है। इसके जप से सब कुछ प्राप्त हो सकता है। वेदों ने भी इस पंचाक्षर मंत्र की महिमा का गान किया है। षडाक्षर मंत्र सभी लोगों के लिये उपयोगी है। पंचाक्षर मंत्र के आगे ॐकार जोड़ देने से षडाक्षर मंत्र बन जाता है। यह मंत्र साक्षात् शिवस्वरूप है। '**नमः शिवाय**' ईशानादि (भगवान् शिव के पाँचों मुखों) का क्रम से वाचक है। अर्थात् इस मंत्र के पाँचों अक्षर भगवान् शिव के पाँचों मुखों को व्यक्त करते हैं। षडाक्षर मंत्र को जपनेवाले सभी मंत्रों के जप के फल को प्राप्त कर लेते हैं। '**ॐ नमः शिवाय**' सभी मंत्रों में श्रेष्ठ है। अतः इस मंत्र से भगवान् शिव की उपासना करनी चाहिये। (अ. पु. 327/7-10)

रुद्राक्षमाला से इस मन्त्र का जप मोक्षदायक होता है। मन्त्र का जप अँगूठे एवं अनामिका के सहारे करना चाहिये। जप करते समय सुमेरु का उल्लंघन नहीं करना चाहिये। सुमेरुपर पहुँचने पर माला को उल्टी कर जप करना चाहिये। जप करते समय माला हाथ से छूट कर गिरनी नहीं चाहिये। गलती

से गिर जानेपर मन्त्र का दो सौ बार जप(प्रायश्चित्तस्वरूप) करना चाहिये(अ. पु. 327/3-5)।

शिवपूजा में घंटे बजाने के महत्त्व को समझाते हुए कहा गया है कि घंटे की ध्वनि में सभी प्रकार के वाद्ययन्त्रों की ध्वनि निहित होती है। इसलिये इसके बजाने से धन-सम्पत्ति की अर्थात् भोगों की प्राप्ति होती है। लिंग एवं वह स्थान जहाँ लिंग स्थापित है, उसकी सफाई बाल्मीकि की मिट्टी, गाय के गोबर एवं मूत्र तथा राख से करनी चाहिये(अ. पु. 327/6-7)। आँवले के आकारवाले रुद्राक्ष को धारण करना सर्वोत्तम होता है। इसलिये इसे धारण करना चाहिये(अ. पु. 327/3)।

अग्नि पुराण में लिंग-मूर्तियों के निर्माण और प्रतिष्ठापन के लिये विस्तृत निर्देश एवं आदेश दिये गये हैं(अ. पु. अ. 53), और उसमें अनेक प्रकार की लिंग-मूर्तियों का भी उल्लेख किया गया है। कुछ लिंग-मूर्तियाँ छोटी-छोटी होती हैं जिनकी उपासना प्रायः घरों में होती है, और उन्हें आसानी से इधर-उधर ले जाया जा सकता है। मंदिरों में वृहदाकार अचल मूर्तियों का प्रतिष्ठापन किया जाता है। ये दोनों ही प्रकार की मूर्तियाँ किंचित् शंक्वाकार और खूब गोलाई लिये होनी चाहिये। वे पकी मिट्टी, कच्ची मिट्टी, लकड़ी, पत्थर, स्फटिक, लोहे, ताँबे, पीतल, चाँदी, सोने अथवा रत्नों की बनायी जा सकती हैं(अ. पु. अध्याय 54)।

इन विभिन्न प्रकार के लिंगों की विशेषताओं(अथवा फलों) को भी बताया गया है। लिंग-मूर्तियों के निर्माण के संबंध में निर्देश देते समय 'मुखलिंगों' की भी चर्चा की गयी है। इन मूर्तियों में लिंगपर शिव की पूरी या आंशिक आकृति खुदी हो सकती है। ये आकृतियाँ एकमुखी, चारमुखी या तीनमुखी हो सकती हैं(अ. पु. 54/41-48)।

अग्नि पुराण में शिवार्चनविधि का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। इसी प्रकार मन्दिर-निर्माण, लिंग-प्रतिष्ठा या पुनः प्रतिष्ठा आदि संबंधी विस्तृत विवरण इस पुराण में हम पाते हैं। शिवसंबंधी विविध मन्त्रों का भी इसमें उल्लेख है। रुद्रशान्ति एवं पशुपति-शान्ति संबंधी मन्त्र भी दिये गये हैं। रुद्रशान्ति के द्वारा ग्रहदोष, बिमारी तथा जादू-टोना दूर होता है तथा अन्य मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है(अ. पु./अध्याय 324 देखें)।

लिंग-स्थापना के बारे में कहा गया है कि यह माघ से प्रारंभ करके पाँच महीनेतक किया जा सकता है पर चैत्र मास और बृहस्पति एवं शुक्र के उदय के प्रथम तीन करणों को छोड़ करके। यह स्थापना मुख्यतः शुक्लपक्ष में करनी चाहिये या कृष्णपक्ष में पंचमी, चतुर्थी, नवमी, अष्टमी और चतुर्दशी तिथि को छोड़कर। बाकी सभी दिन पवित्र हैं केवल उन दिनों को छोड़कर जो क्रूर ग्रहों के दिन हैं। शतभिषा, धनिष्ठा, आर्द्रा, अनुराधा, उत्तरा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तरभाद्रपद, रोहिणी और श्रावण नक्षत्र शुभ हैं। जिस दिन स्थापना करनी हो उस दिन कुंभ, सिंह, वृश्चिक, तुला, कन्या, वृष और धनु लग्न हो(अ. पु. 92/2-15)। इस पुराण में मुहूर्त तथा मण्डप आदि के निर्माण से लेकर प्राण-प्रतिष्ठातक की विधि भी दी हुई है(अ. पु. अध्याय 95-97 देखें)।

इस पुराण में शैवतीर्थ वाराणसी की महिमा बताते हुए कहा गया है कि यहाँ निवास करनेवाले को भोग और मोक्ष दोनों प्राप्त होता है(अ. पु. 112/1)। शिवजी इस क्षेत्र को कभी भी त्यागते नहीं, इसलिये इसे अविमुक्तक्षेत्र भी कहते हैं। भजन, तप, दान आदि जो कर्म यहाँ किये जाते हैं उनका अक्षय फल होता है(अ. पु. 112/2)। स्नान, जप, तर्पण, देवपूजा, दान या निवास जो कुछ भी वाराणसी में किया जाय उससे मोक्ष एवं भोग की प्राप्ति होती है(अ. पु. 112/7)।

वाराणसी परं तीर्थं गौर्य्यै प्राह महेश्वरः।
भुक्तिमुक्तिप्रदं पुण्यं वसतां गृणतां हरिम्।।
गौरीक्षेत्रं न मुक्तं वै अविमुक्तं ततः स्मृतम्।
जप्तं तप्तं हुतं दत्तं अविमुक्ते किलाक्षयम्।। (अग्निपु. 112/1-2)

महाशिवरात्रिव्रत के बारे में बताया गया है कि यह व्रत भोग एवं मोक्ष देनेवाला है। माघ-फाल्गुन मास की कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को यह व्रत किया जाता है। उस दिन उपवास, रात्रिजागरण तथा शिवपूजन करना चाहिये। क्योंकि भगवान् शिव भोग-मोक्षदाता, नरकसमुद्र से पार लगानेवाले, शान्ति, राज्य, सन्तति, सौभाग्य, स्वास्थ, ज्ञान, भौतिक समृद्धि एवं स्वर्ग आदि प्रदान करनेवाले हैं(अ. पु. 193/1-6)।

शिवरात्रिव्रतं वक्ष्ये भुक्तिमुक्तिप्रदं शृणु।
माघ फाल्गुनयोर्मध्ये कृष्णा या तु चतुर्दशी।।
कामयुक्ता तु सोपोष्या कुर्वन् जागरणं व्रती।
आवाहयाम्यहं शम्भु भुक्तिमुक्तिप्रदायकम्।
नरकार्णवकोत्तारनावं शिव! नमोऽस्तु ते।
नमः शिवाय शान्ताय प्रजाराज्यादिदायिने।। (अग्निपु. 193/1-4)

भविष्य पुराण में माहेश्वरव्रत की चर्चा की गयी है। इसके अन्तर्गत बताया गया है कि मार्गशीर्ष महीने के शुक्लपक्ष की त्रयोदशी को एक समय भोजन कर चतुर्दशी को निराहार रहकर महेश्वर की विधि-पूर्वक पूजा करनी चाहिये। पूजा की संक्षिप्त विधि भी इस पुराण में दी गयी है। इस व्रत के करने से हजार अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है। ब्रह्म-हत्यादि पापों से छुटकारा, दीर्घायु, आरोग्य, गणाधिपति का पद, करोड़ों कल्पतक का स्वर्ग और अन्त में भगवान् शिव का पद प्राप्त होता है। इस व्रत के फल का वर्णन न तो बृहस्पति और ब्रह्मा आदि और न तो सिद्धगण ही कर सकते है।(भवि. पु. उत्त. प. अध्याय 97)

इस पुराण में सभी प्रकार के अनिष्टों के शमन तथा सर्वशांति प्रदान करनेवाले रुद्राभिषेक अथवा रुद्र-स्नान की विधि भी संक्षिप्तरूप में बतायी गयी है। विधिपूर्वक रुद्र-स्नान के द्वारा व्यक्ति को सुख एवं संतान की प्राप्ति होती है। (भ. पु. उ. प. अध्याय 124)

मार्कण्डेयजी दक्ष द्वारा शिवनिन्दा के कारण सती के शरीर-त्याग के प्रसंग की चर्चा करते हुए ऋषियों से कहते हैं कि जहाँ शम्भु की अवज्ञा हो, वहाँ विद्वानों को नहीं रुकना चाहिये। अर्थात् शिव-निन्दा से घोर पाप होता है तथा उस निन्दा को श्रवण करने से भी पाप होता है।

शम्भोरवज्ञा यत्रास्ते स्थातव्यं नैव सूरिभिः। (मार्क. महापु. 49/13)

त्रिदेवों की एकता

इन पुराणों में तीनों प्रमुख देवों की तात्त्विक एकता का भी प्रतिपादन हुआ है। अग्नि पुराण में विष्णु के कृष्णावतार की चर्चा के दौरान बाणासुर का प्रसंग आता है। वहाँपर बाणासुर के गर्व का भंजन हो जाने के बाद विष्णु(कृष्ण) भगवान् शिव से कहते हैं कि "(आपने बाणासुर को अभय प्रदान किया है तो मैं भी उसे अभय प्रदान करता हूँ) क्योंकि जो आप द्वारा अभय प्राप्त है वह मेरे द्वारा भी अभय प्राप्त है। हम दोनों में किञ्चित् भी भेद नहीं है, और यदि कोई व्यक्ति हम दोनों में भेद करता है तो वह नरकगामी होता है" (अ. पु. 12/51-52)। इस उद्धरण में विष्णु एवं शिव के अभेद होने का वर्णन है।

जैसा ऊपर कहा जा चुका है, भगवान् शिव की शक्ति से ही ब्रह्मादि देवता पैदा हुए हैं क्योंकि वे परमब्रह्म एवं विज्ञानस्वरूप हैं। तीनों देव उनकी(शिवकी) ही अभिव्यक्तियाँ हैं(अ. पु. 304/2-3)। इस सन्दर्भ में तीनों देवों को शिव की ही विभिन्न अभिव्यक्तियाँ मानी गयी हैं। अर्थात् तीनों देव तात्त्विक दृष्टि से एक ही हैं।

इसी प्रकार यमगीता के अन्तर्गत कहा गया है कि एक ही तत्त्व को कोई हरि, कोई शिव और कोई ब्रह्मा कहते हैं(अ. पु. 382/17-19)। उस तत्त्व को शैवलोग सदाशिव और वैष्णव लोग महाविष्णु कहते हैं। वह तत्त्व निर्गुण-निराकार होता है, लेकिन जब सगुणरूप धारण करता है तो वह नाना प्रकार से पुकारा जाने लगता है।

मार्कण्डेय पुराण में मार्कण्डेयजी क्रौष्टुकि से कहते हैं कि जब परमेश्वर की योगदृष्टि से प्रकृति(की साम्यावस्था) में क्षोभ होता है..... तब ब्रह्माजी प्रकट होते हैं। .....यद्यपि ब्रह्माजी सम्पूर्ण जगत् की उत्पत्ति के स्थान और निर्गुण हैं, तथापि रजोगुण का उपभोग करते हुए सृष्टि में प्रवृत्त होते हैं और ब्रह्मा के कर्त्तव्य का पालन करते हैं। फिर परमेश्वर सत्त्वगुण के उत्कर्ष से युक्त हो श्रीविष्णु का स्वरूप धारणकर धर्मपूर्वक प्रजा का पालन करते हैं। फिर तमोगुण की अधिकता से युक्त हो रुद्ररूप धारण करके सम्पूर्ण जगत् का संहार करते .....। इस प्रकार सृष्टि, पालन और संहार-इन तीनों कालों में तीन गुणों से युक्त होकर भी वे परमेश्वर वास्तव में निर्गुण ही हैं। .....एक ही परमेश्वर भिन्न-भिन्न कार्यों के अनुसार ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र नाम धारण करते हैं। ..... ये ही तीन देवता हैं.....। ये परस्पर एक दूसरे के आश्रित और एक दूसरे से मिले रहते हैं। इनमें एक क्षण का भी वियोग नहीं होता। ये एक दूसरे का कभी त्याग नहीं करते।[1]

1. संक्षिप्त मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणांक, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृ. 141 तथा मा. महापु. 43/11-21

उत्पन्नः स जगद्योनिरगुणोऽपि रजोगुणम्।
भुञ्जन् प्रवर्तते सर्गे ब्रह्मत्वं समुपाश्रितः।।
ब्रह्मत्वे स प्रजाः सृष्ट्वा ततः सत्त्वातिरेकवान्।
विष्णुत्वमेत्य धर्मेण कुरुते परिपालनम्।
ततस्तमोगुणोद्रिक्तो रुद्रत्वे चाखिलं जगत्।
उपसंहृत्य वै शेते त्रैलोक्यं त्रिगुणोऽगुणः।।
यथा प्राग्व्यापकः क्षेत्री पालको लावकस्तथा।
तथा स संज्ञामायाति ब्रह्मविष्णुहरात्मिकाम्।
ब्रह्मत्वे सृजते लोकान् रुद्रत्वे संहरत्यपि।
विष्णुत्वे चाप्युदासीनस्त्रिस्रोऽवस्थाः स्वयम्भुवः।।
रजो ब्रह्मा तमो रुद्रो विष्णुः सत्त्वं जगत्पतिः।
एत एव त्रयो देवा एत एव त्रयो गुणाः।।
अन्योन्यमिथुना ह्येते ह्यन्योन्याश्रयिणस्तथा।
क्षणं वियोगो न ह्येषां न त्यजन्ति परस्परम्।। (मा. महापु. 43/15-21)

अर्थात्- वह जगत्योनि निर्गुण होते हुए भी रजोगुण का आश्रय लेकर ब्रह्मा के रूप में परिणत हो जाता है और सृष्टि-कार्य में प्रवृत्त हो जाता है। वह ब्रह्मा के रूप में प्रजा की सृष्टि करके सतोगुण की अधिकता होने के कारण विष्णु का रूप धारण करके न्याय(धर्म) के अनुसार प्रजापालन करता है। तदनन्तर तमोगुण का उद्रेक होनेपर(वह ब्रह्म) रुद्ररूप धारण करके समस्त विश्व का संहार करके सो जाता है। इस प्रकार वह निर्गुण होते हुए भी तीनों कालों में तीन गुणों का अवलम्बन करता है। सर्वव्यापक और सबका उत्पत्तिकर्त्ता वह सर्वव्यापी ईश्वर इस प्रकार सृष्टि, स्थिति और प्रलय के कारण ही ब्रह्मा, विष्णु और शिव नामों से पुकारा जाता है। वह ब्रह्माभाव से समस्त लोकों की उत्पत्ति करता है। एवं रुद्रभाव से संहार करता है तथा विष्णुभाव से उदासीनतापूर्वक पालन करता है। स्वयम्भू की ये तीन अवस्थायें हैं। ब्रह्मा रजोगुणमय हैं, रुद्र तमोगुणमय हैं और जगत्पति विष्णु सत्त्वगुणमय हैं। ये तीन देवता हैं और तीन ही गुण हैं। ये(निपुणता से) एक दूसरे का आश्रय लेकर स्थित रहते हैं, इनका क्षणभर के लिये भी वियोग नहीं होता और न ये एक दूसरे का त्याग करते हैं।

इसी प्रकार एक अन्य स्थल पर ॐकार की महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है कि ॐकार अक्षर परब्रह्मस्वरूप है(**इत्येतदक्षरं ब्रह्म परमोङ्कारसंज्ञितम्**-मार्क. पु. 42/14, संक्षिप्त मार्क. -ब्रह्म पु.)[1]। यह तीनों वेद, तीनों लोक, तीनों अग्नि, ब्रह्मा, विष्णु तथा महादेव एवं ऋक्, साम और यजुर्वेद है।

1. मार्कण्डेयमहापुराणम्(41/14)

ओमित्येतत् त्रयो वेदास्त्रयो लोकास्त्रयोऽग्नयः।
विष्णुर्ब्रह्मा हरश्चैव ऋक्सामानि यजूंषि च।।[1] (संक्षिप्त मार्क.-ब्रह्मपु. 42/8)

भविष्य पुराण में 'फलत्याग चतुर्दशीव्रत महात्म्य' के प्रसंग में-

"यथा भेदं न पश्यामि शिवविष्णवर्कपद्मजाम्।
तथा ममास्तु विश्वात्मा शङ्करः शंकरः सदा।।" (भ. पु. उ. प. 98/18)

-ऐसा उच्चारण करने को कहा गया है। इस श्लोक से यह स्पष्ट हो जाता है कि शिव, विष्णु, ब्रह्मा तथा सूर्य में कोई अन्तर नहीं है। अर्थात् इन सबमें अभेद है।

उपरोक्त उद्धरण में ॐकार के अन्तर्गत तीनों देवों की प्रतिष्ठा की बात कही गयी है अर्थात् एक ब्रह्म(जिसका वाचक ॐकार है) के अन्तर्गत ही तीनों की स्थिति है। वही निर्गुण शब्दब्रह्म सगुण होकर ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्ररूप धारण कर लेता है। ऐसा रूप धारण करने के बावजूद भी तीनों में विभेद या अलगाव नहीं है, पूर्ण एक्य है।

उपसंहार

अग्निपुराण में नाना प्रकार की विद्याएँ हैं, अतः उसमें किसी देवविशेष को केन्द्र करके उसकी महिमा का गान नहीं किया गया है। हालाँकि उसमें अपेक्षाकृत भगवान् विष्णु के बारे में ज्यादा कुछ कहा गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह पुराण शिव या विष्णु आदि देवों संबंधी प्रचलित मान्यता को स्वीकार करके लिखा गया है। इस कारण इसमें देवों की विशेषता या प्रभुत्व को सीधे-सीधे नहीं बताया गया है। उनका महत्त्व परोक्षरूप से प्रकट किया गया है। इसमें नाना प्रकार की विद्याओं पर ही बल दिया गया है।

इस पुराण में सभी प्रमुख देवों की पूजा, मूर्तिस्थापना तथा मन्दिर-निर्माण आदि बातों का विस्तृत उल्लेख किया गया है। इस पुराण में यदा-कदा जो शिवजी से संबंधित बातें पायी जाती हैं उनका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। जो थोड़े से संदर्भ हमें शिव-माहात्म्यसंबंधी प्राप्त होते हैं उनमें भगवान् शिव के सगुण एवं निर्गुण दोनों रूपों की झलक प्राप्त होती है। निर्गुणरूप में वे परब्रह्म, परात्पर, अव्यक्त, गुणातीत, ज्ञानस्वरूप हैं। सगुण रूप में वे सर्वात्मरूप, विश्वरूप, पंचमुखी, 15 नेत्र वाले, दसभुजावाले, भक्तवत्सल, अनन्त शिर, बाहु एवं पैरवाले, विषपान करनेवाले, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र एवं जगत् आदि सभी के परम कारण, पशुपति, भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाले, रोग-शोक-हारी, त्रिशूल, पाश, धनुष आदि शस्त्रों को धारण करनेवाले, सर्वव्यापी, चन्दशेखर तथा मृत्यंजय आदि हैं।

भविष्य पुराण के पाँच प्रकार के पाठों में से जो वर्तमान लेखक को प्राप्त है उसमें भगवान्

1. मार्कण्डेयमहापुराणम्(41/8-9)

शिवसंबंधी कथाएँ या सन्दर्भ अत्यल्प हैं। उन संदर्भों में भगवान् शिव को सबका स्वामी, कल्याणकारी, विद्या एवं अभय प्रदान करनेवाला, पाप एवं माया का नाश करनेवाला, प्रकाशस्वरूप एवं लोकों का स्वामी कहा गया है। उन्हें ब्रह्मादि का जनक भी बताया गया है।

मार्कण्डेय पुराण मुख्यत: देवी के माहात्म्य को बतलानेवाला ग्रन्थ है। इसमें ब्रह्मा, विष्णु या भगवान् शिव के संदर्भ नगण्य से हैं। शैवदर्शन में शिव एवं शक्ति अथवा ब्रह्म एवं माया को अभिन्न माना गया है। अत: देवी की महिमा शिव की ही महिमा मानी जानी चाहिये। क्योंकि शिव शक्ति के माध्यम से ही जगत्संबंधी सभी प्रकार के व्यापार का संचालन करते हैं। शक्ति अपने आप में स्वतंत्र न होकर शिवेच्छा से ही क्रियाशील हो ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र या समग्र सृष्टि की रचना करती है। मार्कण्डेय पुराण में शक्ति या देवी की महिमा को बताते हुए उसे सभी ऐश्वर्यों से युक्त, सृष्टि, पालन एवं संहार करनेवाली तथा ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र को प्रकट करनेवाली कहा गया है। देवी की महिमा वस्तुत: प्रकारान्तर से महादेव की ही महिमा है।

लिंगार्चन के बिना कोई भी शिवसंबंधी पूजा पूर्ण नहीं होती, ऐसा अग्नि पुराण में कहा गया है। भगवान् शिव लोगों पर अनुग्रह करने के लिये लिंग में निवास करते हैं। लिंगार्चन से भोग एवं मोक्ष दोनों प्राप्त होता है। जो तीनों संध्याओं में प्रतिदिन पार्थिवलिंग की पूजा बिल्वपत्रों से करता है वह अपने कुल की एक सौ ग्यारह पीढ़ियों को तार देता है। लिंग-स्थापन तथा मन्दिर-निर्माण को बड़ा ही पुण्यप्रद बताया गया है। यहाँतक कहा गया है कि आठ इँटों का मन्दिर या खेल-खेल में रेत या मिट्टी के मन्दिर बनानेवाला भी क्रमश: स्वर्ग एवं भोगों को प्राप्त कर लेता है।

पंचाक्षर मन्त्र को अग्नि पुराण में भी महामन्त्र बताया गया है। इसको जपनेवाला सभी मन्त्रों के जप का फल प्राप्त कर लेता है। यह मन्त्र साक्षात् शिवस्वरूप है। इस मन्त्र के पाँचों अक्षर शिव के पाँचों मुखों के द्योतक हैं। '**ॐ नम: शिवाय**' इस षडक्षर मन्त्र से शिव की पूजा करनी चाहिये। शिव-पूजा में घंटे बजाने के महत्त्व को बताते हुए कहा गया है कि इसकी ध्वनि में सभी प्रकार के वाद्ययन्त्रों की ध्वनि मिली होती है। इसलिये शिव-पूजा के समय इसे बजाने से धन-संपत्ति या भोगों की प्राप्ति होती है।

लिंग-स्थापन के मुहूर्तों का भी वर्णन अग्नि पुराण में विस्तार से है। वाराणसीतीर्थ की महिमा को बताते हुए इस पुराण में कहा गया है कि यह भोग-मोक्ष प्रदान करनेवाला है। स्नान, जप, तप, दान, निवास जो कुछ भी वाराणसी में किया जाय उसका फल अक्षय भोग एवं मोक्ष होता है। महाशिवरात्रि व्रत के बारे में भी कहा गया है कि यह भोग एवं मोक्ष देनेवाला है। इस दिन उपवास, शिवपूजा एवं रात्रि-जागरण किया जाना चाहिये।

अन्त में इन पुराणों में त्रिदेवों की एकता का भी प्रतिपादन किया गया है। इन देवों में भेद करनेवाला नरकगामी होता है। एक स्थल पर यह भी बताया गया है कि जहाँ भगवान् शिव की निन्दा होती हो वहाँ व्यक्ति को नहीं रुकना चाहिये। अर्थात् उसे नहीं सुनना चाहिये।

SSSSSSSS